झारखंड उच्च न्यायालय, रांची

एल.पी.ए. संख्या 728 / 2018

लेखा निदेशक, झारखंड ऊर्जा विकास निगम लिमिटेड, इंजीनियरिंग बिल्डिंग, एचईसी, धुर्वा, डाकघर और थाना धुर्वा, जिला रांची, झारखंड अपने विधि अधिकारी अरुण कुमार श्रीवास्तव, उम्र लगभग -52 वर्ष, पुत्र स्वर्गीय श्री आर.के. लाल, निवासी -गैस गोदाम रोड, डाकघर और थाना- नामकुम, जिला-रांची, झारखंड

.... **प्रतिवादी संख्या 3/ अपीलकर्ता**

बनाम

1. मालती देवी, पति- सिकंदर सिंह, निवासी- क्वार्टर नंबर सी-51, अस्पताल के पास, पतरातू थर्मल पावर स्टेशन, डाकघर और थाना- पतरातू , जिला-रामगढ़, झारखंड

... ... **याचिकाकर्ता/प्रतिवादी**

2. अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक, झारखंड ऊर्जा विकास निगम लिमिटेड, इंजीनियरिंग बिल्डिंग, एचईसी, धुर्वा, डाकघर और थाना- धुर्वा, जिला रांची, झारखंड।
3. संयुक्त सचिव, झारखंड ऊर्जा विकास निगम लिमिटेड, इंजीनियरिंग बिल्डिंग, एचईसी, धुर्वा, डाकघर और थाना- धुर्वा, जिला रांची।
4. वित्त नियंत्रक- I, झारखंड ऊर्जा विकास निगम लिमिटेड, इंजीनियरिंग बिल्डिंग, एचईसी, धुर्वा, डाकघर और थाना- धुर्वा, जिला रांची।
5. उप महाप्रबंधक (प्रशासन), पीटीपीएस, पतरातू, झारखंड ऊर्जा विकास निगम लिमिटेड, इंजीनियरिंग बिल्डिंग, एचईसी, धुर्वा, डाकघर और थाना- धुर्वा, जिला रांची, झारखंड।

6. वरिष्ठ प्रबंधक (एफ एंड ए), झारखंड ऊर्जा विकास निगम लिमिटेड, इंजीनियरिंग बिल्डिंग, एचईसी, धुर्वा, डाकघर और थाना- धुर्वा, जिला रांची, झारखंड।

.... **उत्तरदाता/प्रदर्शन उत्तरदाता**

कोरम: माननीय श्रीमान जस्टिस सुजीत नारायण प्रसाद

माननीय न्यायमूर्ति अरुण कुमार राय

अपीलकर्ता की ओर से : श्री मुकेश कुमार सिन्हा, अधिवक्ता

08/दिनांक: 24.04.2024

सुजीत नारायण प्रसाद, जे.

1. तात्कालिक अंतर-न्यायालय अपील इस न्यायालय के विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा रिट याचिका (एस) संख्या 2030 / 2017 में पारित दिनांक 28.06.2018 के आदेश/निर्णय के विरुद्ध निर्देशित लेटर्स पेटेंट के खंड-10 के अंतर्गत है, जिसके तहत रिट याचिका को अनुमति दी गई थी तथा संबंधित प्राधिकारी को निर्देश दिया गया था कि वे ब्याज के बिना ग्रेच्युटी का भुगतान सुनिश्चित करें, लेकिन अवकाश नकदीकरण का भुगतान वैधानिक ब्याज के साथ करने का निर्देश दिया गया था।

अन्तरवर्ती आवेदन संख्या 3572 / 2024

2. वर्तमान अपील 1341 दिनों के अत्यधिक विलम्ब के कारण वर्जित है, इसलिए उक्त विलम्ब को माफ करने के लिए आवेदन भा.वा.सं. 3572 / 2024 के तहत दायर किया

गया हैतत्काल अपील 1341 दिनों की अनुचित देरी के कारण बाधित है, इसलिए उपरोक्त देरी को माफ करने के लिए एक आवेदन दाखिल किया गया है जो अन्तरवर्ती आवेदन संख्या 3572 / 2024।

3. यह अदालत, यह देखते हुए कि वर्तमान अंतर्वादी अपील 1341 दिनों की अत्यधिक देरी के बाद दाखिल की गई है, उचित समझती है कि पहले देरी की स्वीकृति के लिए आवेदन पर विचार किया जाए, पहले आदेश की वैधता और उचितता पर योग्यता के आधार पर जाने से पहले।

4. तत्काल अंतरिम आवेदन में की गई दलील के अनुसार देरी को माफ करने का आधार यह लिया गया है कि अपीलकर्ता ने 15.07.2018 को विवादित आदेश की प्रमाणित प्रति के लिए आवेदन किया था, जिसे 19.07.2018 को सौंप दिया गया था, लेकिन असावधानी के कारण उक्त प्रमाणित प्रति अधिवक्ता के कार्यालय में खो गई, जिन्होंने रिट कोर्ट के समक्ष अपीलकर्ता का प्रतिनिधित्व किया था। बाद में, निर्देशानुसार अपील का ज्ञापन 07.12.2018 को W.P (S) संख्या 2030 / 2017 में पारित विवादित आदेश दिनांक 28.06.2018 की वेब कॉपी के साथ दायर किया गया था।

5. यह भी कहा गया है कि अपील 02.03.2020 को सूचीबद्ध की गई थी, जिसके द्वारा दोषों को दूर करने के लिए दो सप्ताह का अनिवार्य आदेश दिया गया था, लेकिन कोविड-19 के प्रसार और लॉकडाउन के कारण दोषों को दूर नहीं किया जा सका, इस तरह अपील को डिफ़ॉल्ट के लिए खारिज कर दिया गया, जिसकी सूचना इस न्यायालय की रजिस्ट्री द्वारा 02.11.2020 को दी गई है। यह कहा गया है कि ऐसी जानकारी मिलने के बाद, अपील की बहाली के लिए 30.11.2021 को सिविल विविध याचिका सी.एम.पी संख्या 412 ऑफ 2021 दायर की गई थी [एल.पी.ए संख्या 728 ऑफ 2018], जिसे 13.02.2024 के आदेश के तहत अनुमति दी गई थी, बशर्ते कि एल.पी.ए संख्या 728 ऑफ 2018 में बताए गए दोषों को दूर किया जाए।

6. यह भी प्रस्तुत किया गया है कि एक अन्य अनिवार्य आदेश द्वारा दोषों को दूर करने के लिए समय दिया गया था, जिसमें रिट कोर्ट के आदेश की प्रमाणित प्रति दाखिल करना भी शामिल है। यह प्रस्तुत किया गया है कि नई प्रमाणित प्रति के लिए आवेदन दाखिल करने के बाद, चूंकि पिछली प्रति खो गई थी, इसलिए रजिस्ट्री ने 18.03.2024 की नई स्टाम्प रिपोर्टिंग के माध्यम से 1341 दिनों की सीमा बताई। हालाँकि, 06.04.2024 को कार्यालय में फ़ाइलों को व्यवस्थित करने के दौरान , रिट याचिका में पारित विवादित आदेश की पहली प्रमाणित प्रति, जिसे 19.07.2018 को सौंपा गया था, एक अन्य फ़ाइल में मिली, जिसे तत्काल अंतरिम आवेदन के साथ संलग्न किया गया है।

7. अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता ने प्रस्तुत किया है कि उपरोक्त तथ्य पर विचार करते हुए, यह स्पष्ट है कि कार्यालय द्वारा बताई गई देरी जानबूझकर नहीं की गई है और यदि देरी को माफ नहीं किया गया तो अपीलकर्ता को अपूरणीय क्षति होगी।

8. हमने विलम्ब क्षमा आवेदन पर अपीलकर्ता के विद्वान अधिवक्ता को सुना है और उस पर विचार करने से पहले, यह न्यायालय कुछ विधिक प्रस्तावों को संदर्भित करना उचित और उचित समझता है, जैसा कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अत्यधिक विलम्ब को क्षमा करने के न्यायालय के दृष्टिकोण के संबंध में प्रतिपादित किया गया है।

9. इस तथ्य के बारे में कोई विवाद नहीं है कि सामान्यतः लिस को सीमा अवधि के तकनीकी आधार पर खारिज नहीं किया जाना चाहिए, लेकिन निश्चित रूप से यदि अपील दायर करने में अत्यधिक विलम्ब होता है, तो न्यायालय का कर्तव्य है कि वह लिस के गुण-दोष पर विचार करने से पहले विलम्ब को माफ करने के आवेदन पर विचार करे ।

10. यहाँ यह उल्लेख करना आवश्यक है कि सीमा का कानून कानूनी अधिकतम सीमा में निहित है (यह सामान्य कल्याण के लिए है कि मुकदमेबाजी के लिए एक अवधि निर्धारित की जाए) । सीमा के नियमों का उद्देश्य पार्टियों के अधिकारों को नष्ट करना नहीं है, बल्कि विचार यह है कि प्रत्येक कानूनी उपाय को विधायी रूप से तय समय के लिए

जीवित रखा जाना चाहिए, जैसा कि माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने **बृजेश कुमार एवं अन्य बनाम हरियाणा राज्य एवं अन्य , (2014) 11 एससीसी 351** में दिए गए निर्णय में कहा है।

11. **जनरल एक्सीडेंट फायर एंड लाइफ एश्योरेंस कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम जनमहोमद अब्दुल रहीम, (1939-40) 67 आईए 416 में प्रिवी काउंसिल ने टैगोर लॉ लेक्चरर्स,** 1932 में श्री मित्रा के लेखों पर भरोसा किया, जिसमें कहा गया है कि:

> *"सीमा और नुस्खे का एक कानून किसी विशेष मामले में कठोरता से और अन्यायपूर्ण तरीके से संचालित होता प्रतीत हो सकता है, लेकिन यदि कानून सीमा प्रदान करता है, तो इसे किसी विशेष पक्ष को कठिनाई के जोखिम पर भी लागू किया जाना चाहिए क्योंकि न्यायाधीश, न्यायसंगत आधार पर, कानून द्वारा दी गई समय सीमा को नहीं बढ़ा सकते हैं, इसके संचालन को स्थगित नहीं कर सकते हैं, या कानून द्वारा मान्यता प्राप्त अपवादों को शामिल नहीं कर सकते हैं।"*

12. **पी.के. रामचंद्रन बनाम केरल राज्य, (1997) 7 एससीसी 556** में, सर्वोच्च न्यायालय ने 565 दिनों की देरी की माफी के मामले पर विचार करते समय, जिसमें देरी की माफी के लिए कोई स्पष्टीकरण तो दूर, एक उचित या संतोषजनक स्पष्टीकरण भी नहीं दिया गया था, पैराग्राफ-6 में निम्नानुसार माना गया :

" 6. *सीमा कानून किसी विशेष पक्ष को कठोरता से प्रभावित कर सकता है लेकिन इसे पूरी कठोरता के साथ लागू किया जाना चाहिए जब कानून ऐसा निर्धारित करता है और न्यायालयों के पास न्यायसंगत आधार पर सीमा की अवधि बढ़ाने की कोई शक्ति नहीं है।"*

13. इसी तरह के मुद्दे पर विचार करते समय, **ईशा भट्टाचार्जी बनाम रघुनाथपुर नफ़र** अकादमी, **(2013) 12** एससीसी **649** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने, जिसमें, यह निम्नानुसार माना है :

"21.5 (v) देरी के लिए माफ़ी मांगने वाले पक्ष पर आरोपित सद्भाव की कमी एक महत्वपूर्ण और प्रासंगिक तथ्य है। 21.7। (vii) उदार दृष्टिकोण की अवधारणा को तर्कसंगतता की अवधारणा को शामिल करना होगा और इसे पूरी तरह से मुक्त खेलने की अनुमति नहीं दी जा सकती है। 21.9। (ix) किसी पक्ष का आचरण, व्यवहार और उसकी निष्क्रियता या लापरवाही से संबंधित रवैया प्रासंगिक कारक हैं जिन्हें ध्यान में रखा जाना चाहिए। ऐसा इसलिए है क्योंकि मौलिक सिद्धांत यह है कि अदालतों को दोनों पक्षों के संबंध में न्याय के संतुलन के तराजू को तौलना आवश्यक है और उक्त सिद्धांत को उदार दृष्टिकोण के नाम पर पूरी तरह से नजरअंदाज नहीं किया जा सकता है। (घ) देरी को एक गैर-गंभीर मामला मानने की बढ़ती प्रवृत्ति और इसलिए, उदासीन तरीके से उदासीनता प्रदर्शित करने की प्रवृत्ति को कानूनी मापदंडों के भीतर, निश्चित रूप से, रोकने की आवश्यकता है।"

14. कानून की यह स्थापित स्थिति है कि जब कोई वादी सद्भावनापूर्ण उद्देश्य से कार्य नहीं करता है और साथ ही, उसकी ओर से निष्क्रियता और लापरवाही के कारण, अपील दायर करने की समय-सीमा समाप्त हो जाती है, तो सद्भावनापूर्ण उद्देश्य की कमी और घोर निष्क्रियता और लापरवाही ऐसे महत्वपूर्ण कारक हैं जिन्हें देरी की माफी के प्रश्न पर विचार करते समय ध्यान में रखा जाना चाहिए। इस संबंध में गुजरात उच्च न्यायालय की खंडपीठ द्वारा गुजरात राज्य में **सचिव एवं अन्य बनाम कनुभाई** के माध्यम से दिए गए निर्णय का संदर्भ लिया जा सकता है । **कांतिलाल राणा, 2013 एससीसी ऑनलाइन गुजरात 4202,** जिसमें पैराग्राफ-17 में यह माना गया है कि " कानून ने अपील दायर करने के लिए 30 दिनों की निश्चित सीमा अवधि निर्धारित की है, सरकार सीमा अवधि के प्रावधानों की अनदेखी नहीं कर सकती है क्योंकि विधायिका का यह कभी इरादा नहीं था कि जब सरकार अपीलकर्ता है तो सीमा की एक अलग अवधि होनी चाहिए।"

15. पोस्ट मास्टर जनरल एवं अन्य बनाम लिविंग मीडिया इंडिया लिमिटेड एवं अन्य [(2012) 3 एससीसी 563] के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पैराग्राफ 27 से 29

में निम्नानुसार निर्णय दिया गया है:, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने पैराग्राफ 27 से 29 में निम्नानुसार निर्णय दिया है :

"27. *इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि संबंधित व्यक्ति इस न्यायालय में विशेष अनुमति याचिका दायर करके मामले को उठाने के लिए निर्धारित समय-सीमा सहित शामिल मुद्दों से अच्छी तरह वाकिफ या परिचित थे। वे यह दावा नहीं कर सकते कि जब विभाग के पास न्यायालय की कार्यवाही से परिचित सक्षम व्यक्ति थे, तो उनके पास अलग से समय-सीमा थी। उचित और स्वीकार्य स्पष्टीकरण के अभाव में, हम यह सवाल उठा रहे हैं कि देरी को केवल इसलिए यंत्रवत् क्यों माफ किया जाए, क्योंकि सरकार या सरकार की कोई शाखा हमारे समक्ष पक्ष है।*

28. *हालांकि हम इस तथ्य से अवगत हैं कि देरी के मामले में जब कोई घोर लापरवाही या जानबूझकर की गई निष्क्रियता या सद्भावना की कमी नहीं थी, तो पर्याप्त न्याय को आगे बढ़ाने के लिए एक उदार रियायत अपनाई जानी चाहिए, हमारा मानना है कि तथ्यों और परिस्थितियों में, विभाग विभिन्न पूर्व निर्णयों का लाभ नहीं उठा सकता है। कई नोट बनाने की अवैयक्तिक मशीनरी और विरासत में मिली नौकरशाही पद्धति के कारण दावा आधुनिक तकनीकों के उपयोग और उपलब्ध होने के मद्देनजर स्वीकार नहीं किया जा सकता है। सीमा का कानून निस्संदेह सरकार सहित सभी को बांधता है।*

29. *हमारे विचार में, सभी सरकारी निकायों, उनकी एजेंसियों और साधनों को यह बताने का यह सही समय है कि जब तक उनके पास देरी के लिए उचित और स्वीकार्य स्पष्टीकरण न हो और कोई नेक प्रयास न हो, तब तक इस सामान्य स्पष्टीकरण को स्वीकार करने की कोई आवश्यकता नहीं है कि प्रक्रिया में काफी हद तक प्रक्रियागत लालफीताशाही के कारण फ़ाइल को कई महीनों/वर्षों तक लंबित रखा गया। सरकारी विभागों का यह विशेष दायित्व है कि वे अपने कर्तव्यों का*

पालन पूरी लगन और प्रतिबद्धता के साथ करें। देरी के लिए माफ़ी एक अपवाद है और इसका इस्तेमाल सरकारी विभागों के लिए प्रत्याशित लाभ के रूप में नहीं किया जाना चाहिए। कानून सभी को समान प्रकाश में रखता है और इसे कुछ लोगों के लाभ के लिए इस्तेमाल नहीं किया जाना चाहिए।"

16. इसी प्रकार, **माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने मध्य प्रदेश राज्य एवं अन्य बनाम चैतराम मेवाडे, [(2020) 10 एससीसी 667], पोस्ट मास्टर जनरल एवं अन्य बनाम लिविंग मीडिया इंडिया लिमिटेड एवं अन्य (सुप्रा)** में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए निर्णय का उल्लेख करते हुए पैराग्राफ 1 से 5 में निम्नानुसार निर्णय दिया है:

"**1.** *मध्य प्रदेश राज्य बार-बार एक ही काम कर रहा है और उसका आचरण सुधारने लायक नहीं लग रहा है। विशेष अनुमति याचिका 588 दिनों की देरी के बाद दायर की गई है। हमारे पास मध्य प्रदेश राज्य द्वारा अपील दायर करने में इस तरह की अत्यधिक देरी से निपटने का अवसर था, जो कि हमारे दिनांक 15-10-2020 के आदेश के अनुसार मध्य प्रदेश राज्य बनाम भेरूलाल [मध्य प्रदेश राज्य बनाम भेरूलाल, (2020) 10 एससीसी 654] में दायर की गई थी।*

2. हमने उस मामले में एक विस्तृत आदेश लिखा है और हमें फिर से वही तर्क दोहराने का कोई उद्देश्य नहीं दिखता, सिवाय इसके कि जो तथ्य बताए गए हैं, उन्हें दर्ज किया जाए, जिसके आधार पर देरी को माफ करने की मांग की गई है। 5-1-2019 को, यह कहा गया है कि 13-11-2018 को दिए गए फैसले के संबंध में सरकारी वकील से संपर्क किया गया था [चैत्रम मेवाडे बनाम मध्य प्रदेश राज्य, 2018 एससीसी ऑनलाइन एचपी 1632] और विधि विभाग ने 26-5-2020 को विवादित आदेश के खिलाफ एसएलपी दाखिल करने की अनुमति दी। इस प्रकार, विधि विभाग ने यह तय करने में लगभग 17 महीने का समय लगा दिया कि एसएलपी दाखिल की जानी चाहिए या नहीं। विधि विभाग के लिए इससे बड़ी अक्षमता का प्रमाण पत्र क्या होगा।

3. *हम मध्य प्रदेश राज्य के मुख्य सचिव को कानूनी विभाग के पुनर्गठन के पहलू पर विचार करने का निर्देश देना उचित समझते हैं क्योंकि ऐसा प्रतीत होता है कि विभाग किसी भी उचित समयावधि के भीतर अपील दायर करने में असमर्थ है, और सीमा के भीतर तो बिलकुल भी नहीं। इस प्रकार के बहाने, जैसा कि पहले ही उपरोक्त आदेश में दर्ज किया जा चुका है, पोस्टमास्टर जनरल बनाम लिविंग मीडिया (इंडिया) लिमिटेड के निर्णय के मद्देनजर अब स्वीकार्य नहीं हैं। [पोस्टमास्टर जनरल बनाम लिविंग मीडिया (इंडिया) लिमिटेड, (2012) 3 एससीसी 563: (2012) 2 एससीसी (सिविल) 327: (2012) 2 एससीसी (क्रि) 580: (2012) 1 एससीसी (एल एंड एस) 649]*

4. *हमने यह भी चिंता व्यक्त की है कि इस तरह के मामले केवल सुप्रीम कोर्ट से बर्खास्तगी का प्रमाण पत्र प्राप्त करने के लिए "प्रमाण पत्र मामले" हैं ताकि मामले को शांत किया जा सके। इसका उद्देश्य उन अधिकारियों को बचाना है जो दोषी हो सकते हैं। हमने स्थिति की विडंबना भी दर्ज की है जहां इन फाइलों पर बैठे रहने वाले और कुछ नहीं करने वाले अधिकारियों के खिलाफ कोई कार्रवाई नहीं की जाती है।*

5. *देरी की अवधि और जिस लापरवाही से आवेदन को लिखा गया है, उसमें न्यायिक समय की बर्बादी को देखते हुए, हम याचिकाकर्ता राज्य पर 35,000 रुपये का जुर्माना लगाते हैं, जिसे मध्यस्थता और सुलह परियोजना समिति के पास जमा किया जाना चाहिए। यह राशि चार सप्ताह के भीतर जमा की जानी चाहिए। फाइल दाखिल करने और फाइलों पर बैठे रहने में देरी के लिए जिम्मेदार अधिकारियों से यह राशि वसूल की जानी चाहिए और उक्त राशि की वसूली का प्रमाण पत्र भी उक्त समयावधि के भीतर इस न्यायालय में दाखिल किया जाना चाहिए। हमने उप महाधिवक्ता को चेतावनी दी है कि इस तरह के किसी भी लगातार मामले के लिए लागत बढ़ती रहेगी।"*

17. **रामलाल, मोतीलाल और छोटेलाल मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय बनाम रीवा कोलफील्ड्स लिमिटेड, (1962) 2 एससीआर 762,** ने माना है कि केवल इसलिए कि दिए गए मामले के तथ्यों में पर्याप्त कारण बताए गए हैं, अपीलकर्ता को देरी को माफ करने का कोई अधिकार नहीं है। पैराग्राफ-12 में, इसे निम्नानुसार माना गया है : -

"12. हालांकि, इस बात पर जोर देना जरूरी है कि पर्याप्त कारण बताए जाने के बाद भी कोई पक्ष अधिकार के तौर पर संबंधित देरी को माफ करने का हकदार नहीं है। पर्याप्त कारण का सबूत धारा 5 द्वारा न्यायालय में निहित विवेकाधीन अधिकारिता के प्रयोग के लिए एक शर्त है। यदि पर्याप्त कारण साबित नहीं होता है तो आगे कुछ नहीं करना है; देरी को माफ करने के लिए आवेदन को केवल इसी आधार पर खारिज किया जाना चाहिए। यदि पर्याप्त कारण दिखाया जाता है तो न्यायालय को यह जांच करनी होगी कि क्या उसे अपने विवेक से देरी को माफ करना चाहिए। मामले का यह पहलू स्वाभाविक रूप से सभी प्रासंगिक तथ्यों पर विचार करने का परिचय देता है और यह इस स्तर पर है कि पक्ष की तत्परता या उसकी सद्भावना पर विचार किया जा सकता है; लेकिन पर्याप्त कारण दिखाए जाने के बाद विवेकाधीन शक्ति का प्रयोग करते समय जांच का दायरा स्वाभाविक रूप से केवल ऐसे तथ्यों तक सीमित होगा जिन्हें न्यायालय प्रासंगिक मान सकता है। यह इस बात की जांच को उचित नहीं ठहरा सकता कि पक्ष अपने पास उपलब्ध पूरे समय के दौरान निष्क्रिय क्यों बैठा रहा। इस संबंध में हम यह बता सकते हैं कि जब न्यायालय सीमा अधिनियम की धारा 14 के अंतर्गत किए गए आवेदनों पर विचार कर रहा होता है, तो सद्भावना या उचित परिश्रम के विचार हमेशा महत्वपूर्ण और प्रासंगिक होते हैं। ऐसे आवेदनों पर विचार करते समय न्यायालय को धारा 5 और 14 के संयुक्त प्रावधानों के प्रभाव पर विचार करने के लिए कहा जाता है। इसलिए, हमारी राय में, धारा 14 के प्रावधानों द्वारा स्पष्ट रूप से महत्वपूर्ण और प्रासंगिक बनाए गए विचारों को उसी सीमा तक और उसी तरीके से उन आवेदनों पर लागू नहीं किया जा सकता है, जो धारा 14 के संदर्भ के बिना

केवल धारा 5 के अंतर्गत तय किए जाने वाले हैं। वर्तमान मामले में यह मानने में कोई कठिनाई नहीं है कि अपीलकर्ता के पक्ष में विवेकाधिकार का प्रयोग किया जाना चाहिए, क्योंकि सीमा अवधि के दौरान अपीलकर्ता द्‌वारा परिश्रम की कमी के खिलाफ की गई सामान्य आलोचना के अलावा उसके खिलाफ कोई अन्य तथ्य प्रस्तुत नहीं किया गया था। वास्तव में, जैसा कि हम पहले ही बता चुके हैं, विद्‌वान न्यायिक आयुक्त ने अपीलकर्ता के विलम्ब क्षमा आवेदन को केवल इस आधार पर खारिज कर दिया कि अपीलकर्ता का यह कर्तव्य था कि वह यथाशीघ्र निर्धारित अवधि के भीतर अपील दायर करे, और हमारे विचार में यह कोई वैध आधार नहीं है।

18. इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि विलम्ब क्षमा आवेदन पर विचार करते समय, न्यायालय को विलम्ब क्षमा के लिए पर्याप्त कारण पर विचार करना अपेक्षित है, साथ ही वादी के दृष्टिकोण पर भी विचार करना अपेक्षित है कि वह सद्‌भावनापूर्ण है या नहीं, क्योंकि सीमा अवधि की समाप्ति के पश्चात, दूसरे पक्ष के पक्ष में अधिकार अर्जित हो जाता है, और इस प्रकार, वादी के सद्‌भावनापूर्ण उद्‌देश्य पर तथा साथ ही, उसकी ओर से निष्क्रियता और लापरवाही पर भी विचार करना आवश्यक है।

19. यहां यह भी उल्लेख करना आवश्यक है कि "पर्याप्त कारण" का अर्थ क्या है। "पर्याप्त कारण" के अर्थ पर विचार **बसवराज एवं अन्य बनाम विशेष भूमि अधिग्रहण अधिकारी** [(2013) 14 एससीसी 81] में किया गया है, जिसमें माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्‌वारा पैराग्राफ 9 से 15 में यह माना गया है:-

"9. *पर्याप्त कारण वह कारण है जिसके लिए प्रतिवादी को उसकी अनुपस्थिति के लिए दोषी नहीं ठहराया जा सकता। "पर्याप्त" शब्द का अर्थ "पर्याप्त" या "पर्याप्त" है, क्योंकि यह इच्छित उद्‌देश्य को पूरा करने के लिए आवश्यक हो सकता है। इसलिए, "पर्याप्त" शब्द में केवल वही शामिल है जो एक सामान्य बात है, जो तब किया जाता है जब किसी मामले में मौजूद तथ्यों और परिस्थितियों में इच्छित*

उद्देश्य को पूरा करने के लिए पर्याप्त कार्य किया जाता है, जिसे एक सतर्क व्यक्ति के उचित मानक के दृष्टिकोण से उचित रूप से जांचा जाता है। इस संदर्भ में, "पर्याप्त कारण" का अर्थ है कि पक्ष को लापरवाही से काम नहीं करना चाहिए था या मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के मद्देनजर उसकी ओर से सद्भाव की कमी थी या यह आरोप नहीं लगाया जा सकता है कि पक्ष ने "सावधानी से काम नहीं किया" या "निष्क्रिय रहा"। हालाँकि, प्रत्येक मामले के तथ्य+

`के लिए पर्याप्त आधार प्रदान करनी चाहिए, क्योंकि जब भी न्यायालय विवेक का प्रयोग करता है, तो उसे विवेकपूर्ण तरीके से प्रयोग करना चाहिए। आवेदक को अदालत को यह संतुष्ट करना होगा कि उसे अपने मामले पर मुकदमा चलाने से किसी "पर्याप्त कारण" से रोका गया था, और जब तक कोई संतोषजनक स्पष्टीकरण प्रस्तुत नहीं किया जाता है, अदालत को देरी की माफी के लिए आवेदन की अनुमति नहीं देनी चाहिए। अदालत को यह जांचना होगा कि क्या गलती वास्तविक है या यह केवल एक गुप्त उद्देश्य को छिपाने का एक उपकरण था। (देखें मनिंद्रा लैंड एंड बिल्डिंग कॉर्पोरेशन लिमिटेड बनाम भूतनाथ बनर्जी [एआईआर 1964 एससी 1336], माता दीन बनाम ए नारायणन [(1969) 2 एससीसी 770: एआईआर 1970 एससी 1953], परिमल बनाम वीणा [(2011) 3 एससीसी 545: (2011) 2 एससीसी (सिविल) 1: एआईआर 2011 एससी 1150] और मणिबेन देवराज शाह बनाम बृहन मुंबई नगर निगम [(2012) 5 एससीसी 157: (2012) 3 एससीसी (सिविल) 24: एआईआर 2012 एससी 1629]।)

10. *अर्जुन सिंह बनाम मोहिंद्रा कुमार [एआईआर 1964 एससी 993] में इस न्यायालय ने "अच्छे" और "अच्छे" के बीच अंतर को समझाया। कारण" और "पर्याप्त कारण" के बीच अंतर किया और पाया कि प्रत्येक "पर्याप्त कारण" एक अच्छा कारण है और इसके विपरीत। हालाँकि, यदि कोई अंतर मौजूद है तो यह केवल इतना*

हो सकता है कि अच्छे कारण की आवश्यकता का अनुपालन "पर्याप्त कारण" की तुलना में कम प्रमाण पर किया जाता है।

11. *पर्याप्त न्याय सुनिश्चित करने के लिए "पर्याप्त कारण" की अभिव्यक्ति को उदार व्याख्या दी जानी चाहिए, लेकिन केवल तब तक जब तक संबंधित पक्ष पर लापरवाही, निष्क्रियता या सद्भावना की कमी का आरोप नहीं लगाया जा सकता है, चाहे पर्याप्त कारण प्रस्तुत किया गया हो या नहीं, किसी विशेष मामले के तथ्यों के आधार पर निर्णय लिया जा सकता है और कोई सख्त फार्मूला संभव नहीं है। (देखें मदनलाल बनाम श्यामलाल [(2002) 1 एससीसी 535: एआईआर 2002 एससी 100] और राम नाथ साव बनाम गोबरधन साव [(2002) 3 एससीसी 195: एआईआर 2002 एससी 1201]।)*

12. *यह एक स्थापित कानूनी प्रस्ताव है कि सीमा अवधि का कानून किसी विशेष पक्ष को कठोर रूप से प्रभावित कर सकता है, लेकिन जब कानून ऐसा निर्धारित करता है तो इसे पूरी कठोरता के साथ लागू किया जाना चाहिए। न्यायालय के पास न्यायसंगत आधार पर सीमा अवधि बढ़ाने का कोई अधिकार नहीं है। "किसी वैधानिक प्रावधान से निकलने वाला परिणाम कभी भी बुरा नहीं होता। न्यायालय के पास उस प्रावधान को अनदेखा करने का कोई अधिकार नहीं है, ताकि वह उस प्रावधान के संचालन से होने वाली परेशानी को दूर कर सके।" वैधानिक प्रावधान किसी विशेष पक्ष को कठिनाई या असुविधा का कारण बन सकता है, लेकिन न्यायालय के पास इसे पूर्ण प्रभाव देते हुए लागू करने के अलावा कोई विकल्प नहीं है। कानूनी कहावत ड्यूरा लेक्स एसईडी लेक्स जिसका अर्थ है "कानून कठोर है लेकिन यह कानून है", ऐसी स्थिति में लागू होता है। यह लगातार माना जाता रहा है कि, "असुविधा" किसी क़ानून की व्याख्या करते समय विचार करने के लिए निर्णायक कारक नहीं है।*

13. *सीमा अवधि का क़ानून सार्वजनिक नीति पर आधारित है, इसका उद्देश्य समुदाय में शांति सुनिश्चित करना, धोखाधड़ी और झूठी गवाही को दबाना, परिश्रम*

को तेज़ करना और उत्पीड़न को रोकना है। यह अतीत के उन सभी कार्यों को दफनाने का प्रयास करता है जो बिना किसी कारण के किए गए हैं और समय बीतने के साथ पुराने हो गए हैं। हेल्सबरी के इंग्लैंड के कानून, खंड 28, पृष्ठ 266 के अनुसार:

"605. सीमा अधिनियमों की नीति । - न्यायालयों ने सीमाओं के क़ानूनों के अस्तित्व का समर्थन करते हुए कम से कम तीन अलग-अलग कारण बताए हैं, अर्थात्, (1) कि लंबे समय से निष्क्रिय दावों में न्याय की तुलना में क्रूरता अधिक होती है, (2) कि प्रतिवादी ने पुराने दावे को गलत साबित करने के लिए सबूत खो दिए होंगे, और (3) कि कार्रवाई के अच्छे कारण वाले व्यक्तियों को उचित परिश्रम के साथ उनका पीछा करना चाहिए।" असीमित सीमा असुरक्षा और अनिश्चितता की भावना को जन्म देगी, और इसलिए, सीमा लंबे समय तक आनंद लेने से इक्विटी और न्याय में जो हासिल किया जा सकता है या किसी पार्टी की अपनी निष्क्रियता, लापरवाही या लापरवाही से जो खोया जा सकता है, उसमें व्यवधान या वंचना को रोकती है। (पोपट और कोटेचा प्रॉपर्टी बनाम एसबीआई स्टाफ एसोसिएशन [(2005) 7 एससीसी 510] देखें, राजेंद्र सिंह बनाम सांता सिंह [(1973) 2 एससीसी 705: एआईआर 1973 एससी 2537] और पुंडलिक जालम पाटिल बनाम जलगांव मीडियम प्रोजेक्ट [(2008) 17 एससीसी 448 : (2009) 5 एससीसी (सिविल) 907]।)

14. *पी. रामचंद्र राव बनाम कर्नाटक राज्य [(2002) 4 एससीसी 578: 2002 एससीसी (क्रि) 830: एआईआर 2002 एससी 1856] में इस न्यायालय ने माना कि न्यायिक रूप से सीमा के सिद्धांतों को लागू करना कानून बनाने के बराबर है और यह अब्दुल रहमान अंतुले बनाम आरएस नायक [(1992) 1 एससीसी 225: 1992 एससीसी (क्रि) 93: एआईआर 1992 एससी 1701] में संविधान पीठ द्वारा निर्धारित कानून के विपरीत होगा।*

15. *इस मुद्दे पर कानून को इस तरह से संक्षेपित किया जा सकता है कि जहां कोई मामला सीमा से परे अदालत में पेश किया गया है, आवेदक को अदालत*

को यह बताना होगा कि "पर्याप्त कारण" क्या था, जिसका अर्थ है कि एक पर्याप्त और पर्याप्त कारण जिसने उसे सीमा के भीतर अदालत का दरवाजा खटखटाने से रोका। यदि कोई पक्षकार मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में लापरवाह या सद्भावनाहीन पाया जाता है, या पाया जाता है कि उसने मेहनत से काम नहीं किया या निष्क्रिय रहा, तो देरी को माफ करने का कोई उचित आधार नहीं हो सकता। कोई भी अदालत किसी भी शर्त को लागू करके इस तरह की अत्यधिक देरी को माफ करने में उचित नहीं हो सकती। आवेदन पर केवल इस न्यायालय द्वारा देरी की माफी के संबंध में निर्धारित मापदंडों के भीतर ही निर्णय लिया जाना है। यदि किसी वादी को समय पर अदालत आने से रोकने के लिए कोई पर्याप्त कारण नहीं है, तो बिना किसी औचित्य के देरी को माफ करना, कोई भी शर्त रखना, वैधानिक प्रावधानों का उल्लंघन करने वाला आदेश पारित करने के बराबर है और यह विधायिका के प्रति पूर्ण उपेक्षा दिखाने के समान है ।

20. इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि पर्याप्त कारण का अर्थ है कि पक्षकार को लापरवाही से काम नहीं करना चाहिए था या मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के मद्देनजर उसकी ओर से सद्भावना की कमी थी या यह आरोप नहीं लगाया जा सकता कि पक्षकार ने "जानबूझकर काम नहीं किया" या "निष्क्रिय रहा"। हालांकि, प्रत्येक मामले के तथ्य और परिस्थितियाँ संबंधित न्यायालय को विवेक का प्रयोग करने में सक्षम बनाने के लिए पर्याप्त आधार प्रदान करनी चाहिए, क्योंकि जब भी न्यायालय विवेक का प्रयोग करता है, तो उसे विवेकपूर्ण तरीके से प्रयोग करना चाहिए। आवेदक को न्यायालय को यह संतुष्ट करना चाहिए कि उसे अपने मामले पर मुकदमा चलाने से किसी "पर्याप्त कारण" से रोका गया था, और जब तक कोई संतोषजनक स्पष्टीकरण प्रस्तुत नहीं किया जाता है, न्यायालय को देरी की माफी के लिए आवेदन स्वीकार नहीं करना चाहिए। न्यायालय को यह जांचना होगा कि क्या गलती सद्भावनापूर्ण थी या केवल गुप्त उद्देश्य को छिपाने का एक उपकरण था जैसा कि

मनिंद्र भूमि और भवन निगम लिमिटेड बनाम भूतनाथ बनर्जी और अन्य, एआईआर 1964 एससी 1336, लाला मातादीन में माना गया है। वी.आर.एस. ए. नारायणन, (1969) 2 एससीसी 770, परिमल वी.आर.एस. वीणा उर्फ़ भारती, (2011) 3 एससीसी 545 और मणिबेन देवराज शाह बनाम । बृहन् मुंबई नगर निगम, (2012) 5 एससीसी 157।

21. उपर्युक्त निर्णयों में यह भी माना गया है कि पर्याप्त कारण की अभिव्यक्ति को पर्याप्त न्याय सुनिश्चित करने के लिए एक उदार व्याख्या दी जानी चाहिए, लेकिन केवल तब तक जब तक संबंधित पक्ष पर लापरवाही, निष्क्रियता या सद्भाव की कमी का आरोप नहीं लगाया जा सकता है, चाहे पर्याप्त कारण प्रस्तुत किया गया हो या नहीं, किसी विशेष मामले के तथ्यों के आधार पर तय किया जा सकता है और कोई स्ट्रेटजैकेट फॉर्मूला संभव नहीं है, इस संबंध में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा **राम नाथ साव उर्फ़ राम नाथ साहू और अन्य बनाम गोबरधन साव और अन्य , (2002) 3 एससी 195** में दिए गए निर्णय का संदर्भ लिया जा सकता है , जिसमें पैराग्राफ -12 में, यह निम्नानुसार माना गया है : -

> *"12. इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि अधिनियम की धारा 5 या संहिता के आदेश 22 नियम 9 या किसी अन्य समान प्रावधान के अर्थ में "पर्याप्त कारण" की अभिव्यक्ति को उदार व्याख्या प्राप्त होनी चाहिए ताकि जब किसी पक्ष पर कोई लापरवाही या निष्क्रियता या सद्भावना की कमी आरोपित न की जा सके, तो पर्याप्त न्याय को आगे बढ़ाया जा सके। किसी विशेष मामले में प्रस्तुत किया गया स्पष्टीकरण "पर्याप्त कारण" होगा या नहीं, यह प्रत्येक मामले के तथ्यों पर निर्भर करेगा। कदम उठाने में हुई देरी के लिए प्रस्तुत किए गए स्पष्टीकरण को स्वीकार करने या अस्वीकार करने का कोई सख्त फॉर्मूला नहीं हो सकता। लेकिन एक बात स्पष्ट है कि अदालतों को दिखाए गए कारण में गलती खोजने की प्रवृत्ति के साथ आगे नहीं बढ़ना चाहिए और निपटान अभियान के अति-उत्साह में एक लापरवाह आदेश द्वारा याचिका को खारिज कर देना चाहिए। प्रस्तुत किए गए स्पष्टीकरण*

को स्वीकार करना नियम होना चाहिए और इनकार करना अपवाद, खासकर तब जब चूक करने वाले पक्ष पर कोई लापरवाही या निष्क्रियता या सद्भावना की कमी आरोपित न की जा सके। दूसरी ओर, मामले पर विचार करते समय न्यायालयों को इस तथ्य को नज़रअंदाज़ नहीं करना चाहिए कि निर्धारित समय के भीतर कदम न उठाने से दूसरे पक्ष को एक मूल्यवान अधिकार प्राप्त हुआ है जिसे नियमित तरीके से देरी को अनदेखा करके हल्के में नहीं लिया जाना चाहिए। हालाँकि, मामले के बारे में एक पांडित्यपूर्ण और अति-तकनीकी दृष्टिकोण से प्रस्तुत स्पष्टीकरण को अस्वीकार नहीं किया जाना चाहिए जब दांव ऊंचे हों और/या मामले में तथ्यों और कानून के तर्कपूर्ण बिंदु शामिल हों, जिससे उस पक्ष को भारी नुकसान और अपूरणीय क्षति हो, जिसके खिलाफ़ लिस समाप्त हो जाती है, या तो डिफ़ॉल्ट या निष्क्रियता से और ऐसे पक्ष के मूल्यवान अधिकार को पराजित करती है जो योग्यता के आधार पर निर्णय लेने का अधिकार रखता है। मामले पर विचार करते समय, न्यायालयों को पक्षों पर पारित होने वाले आदेश के परिणामी प्रभाव के बीच संतुलन बनाना होगा।"

22. यह न्यायालय, पूर्वोक्त प्रस्ताव और 1341 दिनों के अत्यधिक विलम्ब को माफ करने के लिए विलम्ब माफी आवेदन में दिए गए स्पष्टीकरण पर विचार करने के पश्चात, इस बात की जांच करने जा रहा है कि क्या प्रस्तुत स्पष्टीकरण विलम्ब को माफ करने के लिए पर्याप्त स्पष्टीकरण कहा जा सकता है।

23. उपर्युक्त संदर्भित निर्णयों से यह स्पष्ट है, जिसमें अभिव्यक्ति "पर्याप्त कारण" से निपटा गया है, जिसका अर्थ है कि पक्षकार को लापरवाही से काम नहीं करना चाहिए था या मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के मद्देनजर उसकी ओर से सद्भाव की कमी थी या यह आरोप नहीं लगाया जा सकता है कि पक्षकार ने "जानबूझकर काम नहीं किया है" या "निष्क्रिय रहा"।

24. ऊर्जा विकास निगल लिमिटेड के विद्वान अधिवक्ता की उपस्थिति में पारित किए गए निर्णय से यह स्पष्ट है कि अपील दिनांक 07.12.2018 को दायर की गई है, लेकिन प्रमाणित प्रति के साथ नहीं बल्कि आरोपित आदेश की वेब प्रति के साथ, जैसा कि कानून के अनुसार आवश्यक है, अर्थात लगभग छह महीने बीत जाने के बाद अपील दायर की गई है और अंततः प्रमाणित प्रति 1341 दिन बीत जाने के बाद दायर की गई है।

25. जैसा कि प्रस्तुत स्पष्टीकरण से स्पष्ट है, जिसमें कहा गया है कि यद्यपि अपीलकर्ता ने समय रहते प्रमाणित प्रति प्राप्त कर ली थी, लेकिन वह खो गई, लेकिन अपीलकर्ता ने भी विवादित आदेश की प्रमाणित प्रति का दूसरा सेट प्राप्त करने का प्रयास नहीं किया, बल्कि 1341 दिन बीत जाने के बाद ही उसे इस न्यायालय के समक्ष दाखिल किया गया है।

26. आगे यह आधार लिया गया है कि चूंकि अपील कुछ दोषों के साथ दायर की गई थी, इसलिए 02.03.2020 के अनिवार्य आदेश के आधार पर दो सप्ताह के भीतर दोष को दूर करने के लिए अपील को डिफ़ॉल्ट के लिए खारिज कर दिया गया है। यहां, यह उल्लेख करना उचित होगा कि अपीलकर्ता ने कार्यालय द्वारा बताए गए दोषों को दूर करने के लिए लगभग 22 महीनों तक कोई प्रयास नहीं किया। इसके बाद, बीस महीने बीत जाने के बाद, 30.11.2021 को सीएमपी संख्या 412/2021 के तहत बहाली आवेदन दायर किया गया।

27. अतः, इस न्यायालय का यह सुविचारित मत है कि अपील दायर करने में 1341 दिनों के विलंब को माफ करने के लिए दिया गया कारण, विलंब को माफ करने के लिए पर्याप्त स्पष्टीकरण नहीं कहा जा सकता।

28. इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने 05.01.2022 को एलपीए संख्या 86/2021 में एक आदेश पारित किया है, जिसमें विलंब क्षमा आवेदन को खारिज कर दिया गया है, क्योंकि अपील लगभग 687 दिनों की देरी के बाद बिना किसी पर्याप्त कारण के विलंब को माफ करने के लिए दायर की गई थी।

29. इस न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा एल.पी.ए संख्या 835/2019 में पारित आदेश का संदर्भ यहां प्रस्तुत करना आवश्यक है, जिसमें 568 दिनों की देरी को माफ करने का मुद्दा विचाराधीन था।

30. माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दिए गए उपरोक्त निर्णय पर भरोसा करके फाइल को एक टेबल से दूसरे टेबल पर ले जाने के आधार पर राज्य अपीलकर्ताओं द्वारा दिए गए कारण को पर्याप्त कारण नहीं पाया है।

31. राज्य अपीलकर्ता ने एस.एल.पी संख्या 7755/2022 दायर करके माननीय सर्वोच्च न्यायालय की यात्रा की है और एल.पी.ए संख्या 835/2019 में पारित आदेश को चुनौती दी है, लेकिन उक्त एसएलपी संख्या 7755/2022 को खारिज कर दिया गया है जैसा कि 13.05.2022 के आदेश से प्रतीत होता है।

32. माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने झारखंड राज्य द्वारा दायर एक विशेष अनुमति अपील (सी) संख्या 8378-8379/2023 को 28 अप्रैल, 2023 को खारिज कर दिया है, जो इस न्यायालय द्वारा एलपीए संख्या 99/2021 में पारित आदेश के खिलाफ दायर की गई थी, जिसमें इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने अपील दायर करने में 534 दिनों की देरी के आधार पर उक्त अपील को खारिज कर दिया था।

33. हाल ही में, माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने 02.02.2024 को झारखंड राज्य द्वारा दायर एसएलपी (सी) डायरी संख्या (एस) संख्या 3188/2024 को इस न्यायालय द्वारा एलपीए संख्या 401/2022 में पारित दिनांक 14.08.2023 के आदेश के खिलाफ खारिज कर दिया है, जिसमें 259 दिनों की देरी को माफ नहीं किया गया था।

34. माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित सिद्धांत को लागू करते हुए तथा इस तथ्य पर भी विचार करते हुए कि 1341 दिनों की देरी को पर्याप्त रूप से स्पष्ट नहीं किया गया है, तत्काल अंतरिम आवेदन खारिज किये जाने योग्य है।

35. तदनुसार, विलम्ब क्षमा आवेदन, आई.ए. संख्या 3572/2024, को खारिज किया जाता है।

36. इसके परिणामस्वरूप, वर्तमान लेटर्स पेटेंट अपील भी खारिज की जाती है।

37. लंबित अंतरिम आवेदन, यदि कोई हो, का निपटारा हो गया है।

(सुजीत नारायण प्रसाद, जे.)

(अरुण कुमार राय, जे.)

अलंकार /-

एएफआर

अनुवादक: एडवोकेट मधु कुमारी